16

अष्टाध्यायी के प्रथम और द्वितीय अध्याय

संस्कृत वाङ्मय में शब्द दो प्रकार के होते हैं लौकिक और वैदिक। उनका बोध व्याकरण की रीति से सम्भव हैं। और वह व्याकरण लौकिक और वैदिक इन दो भागों में विभक्त है। लौकिक और वैदिक शब्दो के ज्ञान के लिए केवल व्याकरण ग्रन्थ ही हैं। उनमें भी पाणिनी का व्याकरण दोनों प्रकार का है। भगवान् पाणिनि ने अष्टाध्यायी बनाई। और उसको आश्रित करके श्रीमान् भट्टोजी दीक्षित ने वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी बनाई। उसके अंतिम भाग में वैदिक प्रक्रिया दिखाई। इसके बाद पाठों में वह ही वैदिक प्रक्रिया दिखाई जाती हैं। परन्तु पाठ विस्तार के भय से कुछ ही सूत्रों की आलोचना की जाती हैं। सूत्रों के चयन का क्रम तो अष्टाध्यायी के अनुसार ही है अर्थात् अष्टाध्यायी में जिस क्रम से वैदिक व्याकरण के सूत्र हैं उसी क्रम से यहाँ भी लिखे हैं। इसलिए पाठ का नाम भी उसी अनुरूप हैं।

इस पुस्तक के आदि में प्रथम पाठ में जो ये विषय बताएँगे उनमें कुछ - दो पुनर्वसु को एकवचन, षष्ठ्यन्त पतिशब्दकी घिसंज्ञा, इत यजेः करणे, छन्दसि बहुलं षष्ठी इत्यादि। लौकिकप्रयोग में धातु से पूर्व उपसर्गों का प्रयोग होता है। वेद में तो उपसर्गों का धातु के बाद भी और कभी व्यवधान से भी प्रयोग होता है। परवल्लिङ्गं द्वन्द्वतत्पुरुषयोः नियम से द्वन्द्वसमास का परवल्लिङ्ग प्रसिद्ध है, वेद में द्वन्द्व का पूर्ववत् लिङ्ग होता है और यहाँ पाठ में बहुल शब्द का अर्थ भी कहेंगे। किञ्च षष्ठीयुक्तछन्दसि वा का योगविभाग से सर्वे विधयश्छन्दसि विकल्प्यन्ते इति जो परिभाषा सिद्ध होती है वो इस पाठ में बताएंगे और इस पाठ में आपके बोध सुगमता के लिए सूत्र व्याख्या करते समय वैदिक रूपों के साथ लौकिक रूपों का भी उल्लेख करेंगे।

उद्देश्य

इस पाठ को पढ़कर आप सक्षम होंगे–

- वेद में रूप क्रिया में लौकिक प्रक्रिया से क्या भेद हैं ऐसा जान पाने में;
- वेद में सभी विधि विकल्प से होती हैं अत:रूप बोधक परिभाषा को जान पाने में;
- किसी शब्द के लौकिक रूप और वैदिक रूप में क्या होता हैं ऐसा जान पाने में;
- वेद में द्वन्द्व पूर्व लिङ्ग में भी होता है यह भी जान पाने में;
- वेदों में उपसर्गों का प्रयोग कैसे होता है यह जान पाने में;
- निपात विषयी चर्चा का अवगमन कर जान पाने में;
- बहुल शब्दार्थ जान पाने में।

पुनर्वसु शब्द के द्वारा उद्भूत अवयव का ज्योति:समुदाय के अभिधान से दोनों को द्विवचन प्राप्त होने पर यह सूत्र आरम्भ होता है–

16.1 छन्दसि पुनर्वस्वोरेकवचनम्॥ (1.2.61)

सूत्रार्थ:– वेद विषय में पुनर्वसु को विकल्प से एकचन होता है।

सूत्रव्याख्या– इस विधिसूत्र में तीन पद हैं। छन्दसि पुनर्वस्वो: एकवचनम् यह सूत्रगत पदच्छेद है। छन्दसि सप्तम्यन्त पद है, यहाँ वैषयिक सप्तमी है। छन्द शब्द अर्थ वेद है। अत: छन्दसि का वेद में यह अर्थ होता है। पुनर्वस्वो: यह षष्ठ्यन्त पद है। एकवचनम् यह प्रथमान्त पद है। फल्गुनीप्रोष्ठपदानां च नक्षत्रो इस सूत्र से नक्षत्रे पद की अनुवृत्ति आती है। और वह षष्ठीद्विवचनान्त है। अस्मदो द्वयोश्च सूत्र से द्वयो: पद की अनुवृत्ति आती है। जात्याख्यायामेकस्मिन्बहुवचनमन्यतरस्याम् सूत्र से अन्यतरस्याम् पद की अनुवृत्ति आती है। और वह विकल्पार्थक सप्तमीविभक्ति प्रतिरूपक अव्यय है। सूत्रार्थ – वेदविषय में नक्षत्रवाचक पुनर्वसु शब्द से द्वित्त्व अर्थ में विकल्प से एकवचन होता है। उससे ही पक्ष में द्विवचन भी होता है। लोक में तो मात्रा द्विवचन ही होता है।

उदाहरण– पुनर्वसु, पुनर्वसू।

सूत्रार्थ समन्वय– अश्विनी भरण्यादि सत्ताईस संख्यक नक्षत्रों में पुनर्वसु नक्षत्र सातवाँ है। और नक्षत्रवाचक पुनर्वसु शब्द से द्विवचन प्राप्त होने पर प्रकृत सूत्र से एकवचन विधन से सु प्रत्यय में स्वमोर्नपुंसकात् से सु का लुक् होने पर पुनर्वसु प्रयोग सिद्ध होता है। उक्त सूत्र के द्वारा वैकल्पिक द्विवचन के विधान से द्विवचन पक्ष में औ प्रत्यय की प्रक्रिया में पुनर्वसू द्विवचनान्त प्रयोग भी होता है। लोक में तो केवल पुनर्वसू द्विवचनान्त का ही प्रयोग होता है।

विशाखा शब्द से उद्भूत अवयव के ज्योति: समुदाय के अभिधान से दोनों को द्विवचन प्राप्त होने पर यह सूत्र आरम्भ होता है–

टिप्पणी

16.2 विशाखयोश्च॥ (1.2.62)

सूत्रार्थः- छन्द विषय में विशाखा को भी विकल्प एकवचन होता है।

सूत्रव्याख्या– इस विधिसूत्र दो पद हैं। विशाखयोः च यह सूत्रगत पदच्छेद है। विशाखयोः षष्ठीद्विवचनान्त पद है। च अव्ययपद है। छन्दसि पुनर्वस्वोरेकवचनम् सूत्र से छन्दसि और एकवचनं च दोनों पदों की अनुवृत्ति आ रही है। जात्याख्यायामेकस्मिन्बहुवचनमन्यतरस्याम् इस सूत्र से अन्यतरस्याम् पद की अनुवृत्ति आती है। फाल्गुनीप्रोष्ठपदानां च नक्षत्रे सूत्र से नक्षत्रे पद की अनुवृत्ति आती है। और वह षष्ठीद्विवचनान्त है। अस्मदो द्वयोश्च सूत्र से द्वयोः पद की अनुवृत्ति आती है। सूत्रार्थ वेद में नक्षत्रवाचक विशाखशब्द से द्वित्व अर्थ में विकल्प से एकवचन होता है। सत्ताईस संख्यक नक्षत्रों में 'विशाखा' सोलहवां नक्षत्र विशेष है। 'विशाखा' नक्षत्र के नाम से 'वैशाख' मास का नामकरण हुआ।

उदाहरण- विशाखा, विशाखे।

सूत्रार्थसमन्वय- नक्षत्र वाचक विशाखा शब्द से द्विवचन प्राप्त होने पर प्रकृतसूत्र से एकवचन विधान से **विशाखा** यह प्रयोग होता है। उक्तसूत्र से वैकल्पिक एकवचन विधान से द्विवचनपक्ष में **विशाखे** का भी प्रयोग होता है। लोक में तो द्विवचन ही होता है। उससे विशाखे यह प्रयोग होता है।

पतिः समास एव (1.4.8) सूत्र से पति शब्द की समासमात्र में घिसंज्ञा होती है। उससे असमास में पतिशब्द की घिसंज्ञा नहीं होती है। यह तो लोक में। किन्तु वेद में असमास में भी घिसंज्ञा हो अतरू अग्रिमसूत्र आरम्भ करते हैं-

16.3 षष्ठीयुक्तछन्दसि वा॥ (1.4.9)

सूत्रार्थ– षष्ठ्यन्त से युक्त पतिशब्द की छन्द में घिसंज्ञा विकल्प से हो।

सूत्रव्याख्या– इस विधिसूत्र में तीन पद हैं। षष्ठीयुक्तः छन्दसि वा यह सूत्रगत पदच्छेद है। षष्ठीयुक्तः प्रथमान्त पद है। और उसका अर्थ होता है षष्ठ्यन्त से युक्त। छन्दसि सप्तम्यन्त पद है, यहाँ वैषयिक सप्तमी है। वा विकल्पार्थक अव्यय है। पतिः समास एव इस सूत्र से पतिः (1/1) पद की अनुवृत्ति आती है। शेषो घ्यसखि सूत्र घि की अनुवृत्ति आती है। (घि एक संज्ञा है। और वह शेषो घ्यसखि सूत्र से होती है। उसका अर्थ है- ह्रस्व इकारान्त उकारांत की सखि शब्द को छोड़कर घिसंज्ञा होती है)।

षष्ठीयुक्तछन्दसि वा का योगविभाग करते हैं। योग सूत्र को कहते है। षष्ठीयुक्तश्छन्दसि यह एक योग (सूत्र) है, वा अपर योग (सूत्र) है। 'वा' इस द्वितीयसूत्र में छन्दसि पद की अनुवृति आती है। उससे 'वा छन्दसि' यह द्वितीयसूत्र का आकार है। वहां प्रथमसूत्र का अर्थ है वेद विषय में षष्ठ्यन्त से युक्त पति शब्द घिसंज्ञक होता है। द्वितीय सूत्र

टिप्पणी

का अर्थ- व्याकरणशास्त्र में जितना भी कार्य होता है वह वेद में विकल्प से होता है। इससे प्रथम सूत्र के द्वारा जो विधि कही गई वह भी विकल्प से होता है। और योग विभाग करने पर द्वितीय के योग से प्रथम सूत्र का जो अर्थ आया वह तो पाणिनिकृत षष्ठीयुक्तश्छन्दसि वा इस मूलसूत्र से ही सिद्ध है। अतः यह योगारम्भ व्यर्थ है। व्यर्थ होता हुआ ज्ञापित कराता है कि सभी विधियाँ छन्द में विकल्प से होती हैं। उससे योगारम्भ करने पर प्रथम सूत्र से जो विधि कही वह विकल्प से होती है यह सिद्ध होता है। एवं योग विभाग अपने अंश में चरितार्थ है। अन्यत्र भी इसका फल है। जैसे- प्रतीपमन्य उर्मिर्युद्ध्यति इस आत्मनेपद के प्रयोगस्थल पर युद्ध्यति यह परस्मैपद प्रयोग भी होता है। योगारम्भ नहीं करते हैं तो षरूठीयुक्तश्छन्दसि वा इस सूत्र में जो विकल्पत्व कहा गया है वही उसमें भी हो। अन्यत्र न हो। किन्तु अन्यत्र भी विकल्पत्व हो तदर्थ यह योगविभाग किया गया है। बहुलं छन्दसि इत्यादि उसके ही प्रपञ्च हैं। उस प्रथम सूत्र से विधीयमान कार्य छन्द में विकल्प से प्राप्त होता है।

उदाहरण में सूत्रार्थ का समन्वय- ''क्षेत्रस्य पतिना वयम्'' इस प्रयोग में समास के अभाव से पतिः समास एव सूत्र से घिसंज्ञा अप्राप्त में षष्ठीयुक्तश्छन्दसि इस प्रकृतसूत्र से क्षेत्रस्य षष्ठ्यन्त से युक्त पतिशब्द का विकल्प से घिसंज्ञा में पति शब्द विहित का टाप्रत्यय के स्थान में आङो नास्त्रियाम् के योग में आङ के अनादेश में पतिना रूप सिद्ध होता है (तृतीया एकवचन टाविभक्ति की आङ्संज्ञा होती है प्राचीन वैयाकरणों के मत में)। घिसंज्ञा के अभाव में पत्या रूप बनता है। लोक में तो समास में ही घिसंज्ञा होती है। जैसे भूपतिना। असमास स्थल तो पत्या यही प्रयोग होता है।

16.4 अयस्मयादीनि च्छन्दसि॥ (1.4.20)

सूत्रार्थः– वेद में अयस्मय आदि शब्द साधु होते हैं।

सूत्रव्याख्या– इस विधिसूत्र में दो पद हैं। अयस्मयादीनि छन्दसि। अयस्मयादीनि यह प्रथमान्त पद है। अयस्मयः आदिः येषां तानि इमानि अयस्मयादीनि बहुव्रीहिसमास। च्छन्दसि यह सप्तम्यन्त पद है, यहाँ वैषयिक सप्तमी है। सूत्रार्थ– अयस्मयादि पद छन्द विषय में साधु होते हैं। अयस्म आदि शब्द वेद में साधु शब्दत्व से व्यवहित हैं अर्थात् प्रयोजनानुसार भसंज्ञा और पदसंज्ञा होती है। इसी अर्थ की प्रतिपादक हैं उभयसंज्ञान्यपि इति वक्तव्यम् यह वार्तिक भी यहाँ पढा गया है। भसंज्ञा और पदसंज्ञा के अधिकार में इस सूत्र के पाठ से वेद में अयस्मय इत्यादि शब्दों का साधुत्व अङ्गीकृत है।

उदाहरण- स सुष्टुभा स **ऋक्वता** गणेन (ऋ. 3-7-26)।

सूत्रार्थ का समन्वय– अयस्मयादि गण में ऋक्वता यह शब्द पढ़ा गया है। ऋचः अस्य सन्ति इस विग्रह में ऋच्-शब्दोत्तर मतुप्प्रत्यय में और मकार के वकारादेश में ऋच्वत् इस अवस्था में, उभयसंज्ञान्यपि इति वक्तव्यम् इस वार्तिक से पदसंज्ञा में चोः कुः इस सूत्र से पदान्त चकार को कुत्व ककार होता है। उससे ऋक्वत् यह शब्द निष्पन्न होता

है। और उस शब्द के तृतीया एकवचन में ऋक्वता यह रूप बनता है। भसंज्ञा होने पर झलां जशोऽन्ते सूत्र से जश्त्व नहीं होता उससे ककार को गकार नहीं होता है। जश्त्वविधान के लिए पदंज्ञा का भत्वसामर्थ्य बाध से। अन्यथा जश्त्व ही हो कुत्व नहीं हो इस इष्ट प्रयोग की हानि होती है। अतरू उक्त वाक्य के अन्तर्गत ऋक्वता इस पद में पदत्व से कुत्व और भत्व से जश्त्व का अभाव। और यहाँ अनन्तर की विधि नहीं होती है और न ही प्रतिषेध न्याय को बान्ध कर उभयसंज्ञाविधाने किम् प्रमाणम् आनन्तर्यात् एकैव संज्ञा स्यात् यह कहना चाहिए। उभयसंज्ञान्यपि इति वक्तव्यम् इस वार्तिक से। लोक में तो ऋग्वता रूप होता है।

अयसो विकारः इति विग्रहे मयड् वैतयोर्भाषायाम् इत्यनेन मयटि प्रक्रिया अयस् मय इति स्थिते लोके सकारस्य रुत्वे रोश्च उत्वे अय् अ उ मय इति जाते आद्गुणः इति गुणैकादेशे ओकारे विभक्तिकार्ये च अयोमयः इति रूपम् भवति इति लोके। परन्तु पूर्वोक्तसूत्रे अयस्मय इत्येवं पाठदर्शनात् छन्दसि सकारस्य रुत्वाभावः भसंज्ञया सिध्यति। तेन अयस्मयः इत्येव रूपम् वेदे।

16.5 छन्दसि परेऽपि॥ (1.4.81)

सूत्रार्थः वेद में वे गति उपसर्ग संज्ञक शब्द धातु से परे भी होते हैं।

सूत्रव्याख्या– इस विधिसूत्र में तीन पद हैं। छन्दसि परे अपि यह सूत्रगत पदच्छेद है। परे अपि यहाँ पर एङः को पदान्तादति इससे पूर्वरूप होता है। छन्दसि यह सप्तम्यन्त पद है, यहाँ वैषयिक सप्तमी है। परे यह प्रथमा बहुवचनान्त रूप है। अपि यह अव्ययपद है। ते प्राग्धातोः इस सूत्र से ते तथा धातोः दोनों पदों की अनुवृत्ति आ रही है। ते इस पद से गतिसंज्ञक तथा उपसर्गसंज्ञक शब्दों का ग्रहण होता है। सूत्रार्थ होता है– छन्द विषय में गतिसंज्ञक शब्द तथा उपसर्गसंज्ञक शब्द धातु से परे भी हो।

उदाहरण- याति नि हस्तिना। निहन्ति मुष्टिना।

सूत्रार्थ का समन्वय- याति नि हस्तिना यह छान्दस प्रयोग है। यहाँ नि पद गतिसंज्ञक है। प्रकृत सूत्र से गतिसंज्ञक नि- शब्द का याति धातु से परे प्रयोग सिद्ध होता है। लोक में तो ते प्राग्धातोः इस नियम के द्वारा धातू से पूर्व ही गत्युपसर्गसंज्ञक शब्द प्रयुक्त होते है।

16.6 व्यवहिताश्च॥ (1.4.82)

सूत्रार्थ- छन्द में गति तथा उपसर्गसंज्ञक शब्द व्यवधान से भी देखे जाते हैं।

सूत्रावतरणिका– वेद में गतिसंज्ञक तथा उपसर्गसंज्ञक शब्दों के व्यवधान से भी धातू के बाद तथा पूर्व में प्रयोग के लिए यह सूत्र बनाया गया।

सूत्र की व्याख्या– इस सूत्र में दो पद हैं। व्यवहिताः च सूत्रगत पदच्छेद है। व्यवहिताः यह प्रथमान्त पद है। च अव्ययपद है। छन्दसि परेऽपि इस सूत्र से छन्दसि पद की अनुवृत्ति आ रही है, यहाँ वैषयिक सप्तमी है। ते प्राग्धातोः इस सूत्र से ते तथा धातोः दो पदों की अनुवृत्ति आ रही है। ते इससे गतिसंज्ञक तथा उपसर्गसंज्ञक शब्दों का ग्रहण होता है। सूत्रार्थ इस प्रकार है वेद में गतिसंज्ञक तथा उपसर्गसंज्ञक शब्दों का किसी दूसरे शब्द से व्यवहितत्व होने पर भी प्रयोग होता है। उस व्यवधान से गति और उपसर्गसंज्ञक शब्द धातु से पूर्व अथवा पर प्रयुक्त होते हैं यह इस सूत्र का आशय है। छन्द में गति तथा उपसर्गसंज्ञक के परे रहने पर भी प्रयोग करना चाहिए यह सूत्र का भाव है।

उदाहरण- हरिभ्यां याह्योक आ। आ मन्द्रैरिन्द्र हरिभिर्याहि।

सूत्रार्थ का समन्वय- याहि ओक आ इत्यत्र यहाँ 'आ' उपसर्ग का ते प्राग्धातोः इस सूत्र के अनुसार याहि इससे पूर्व में ही प्रयोग होने पर आयाहि ऐसा प्राप्त होने पर व्यवहिताश्च इस प्रकृतसूत्र के बल से आ का बाद में प्रयोग होने से हरिभ्यां याह्योक आ यह सिद्ध होता है। सूत्र में भी-शब्दसामर्थ्य से व्यवहिताश्च सूत्र के बल से 'आ' का व्यवहितत्व से पूर्वप्रयोग होने पर आ मन्द्रैरिन्द्र हरिभिर्याहि यह प्रयोग सिद्ध होता है। इस प्रकार छन्द में उपसर्गों का व्यवहार देखा जाता है। लोक में तो उपसर्गों का प्रयोग धातु से पूर्व ही होता है। धातु और उपसर्गों के में कोई भी व्यवधान नहीं होता है।

पाठगत प्रश्न-16.1

1. छन्दसि पुनर्वस्वोरेकवचनम् का क्या अर्थ है?
2. षष्ठ्यन्त से युक्त पतिशब्द की विकल्प से घिसंज्ञा किस सूत्र से होती है?
3. गतिसंज्ञक और उपसर्गसंज्ञकों का धातु के व्यवहित रूप से प्रयोग किस सूत्र से होता है।
4. किस नक्षत्र का अनुसरण करके वैशाखमास का नामकरण किया गया?
5. छन्दसि परेऽपि सूत्र का अर्थ लिखो?
6. षष्ठीयुक्तश्छन्दसि वा इस सूत्र से कौन सी परिभाषा ज्ञापित की गयी?
7. षष्ठीयुक्तश्छन्दसि वा इस सूत्र का क्या अर्थ है?
8. लोक में असमास में पतिशब्द की घिसंज्ञा होती है अथवा नहीं?

16.7 तृतीया च होश्छन्दसि॥ (2.3.3)

सूत्रार्थ- वेद विषय में हु धातु के अनभिहित कर्म में तृतीया विभक्ति होती है चकार

टिप्पणी

से द्वितीया भी होती है।

सूत्रावतरणिका- वेद में हु-धातु के कर्म को द्वितीया और तृतीया के विधान के लिए यह सूत्र प्रणीत है।

सूत्रव्याख्या– यह विधायक सूत्र है। इससे द्वितीयाविभक्ति और तृतीयाविभक्ति का विधान होता है। इस सूत्र में चार पद हैं। तृतीया च हो: छन्दसि यह सूत्रगत पदच्छेद है। तृतीया यह प्रथमान्त पद है। च यह अव्ययपद है। हो: षष्ठ्यन्त पद है। हो: इसका जुहोति धातु अर्थ है। छन्दसि यह सप्तम्यन्त पद है, यहाँ वैषयिकसप्तमी है, और उसका वेद विषय में यह अर्थ है। अनभिहिते यह अधिकार है। कर्मणि द्वितीया इस सम्पूर्ण सूत्र की यहाँ अनुवृत्ति आती है। सूत्रस्थ चकार से द्वितीया विभक्ति भी होती है यह जानना चाहिए। सूत्रार्थ इस प्रकार है छन्द विषय में हु धातु के अनभिहित कर्म को तृतीया और द्वितीया विभक्ति होती है।

उदाहरण - यवाग्वा/यवागूम् अग्निहोत्रं जुहोति।

सूत्रार्थ का समन्वय– पहले वाले वैदिक वाक्य में हु-धातु का कर्म यवागू है। अत: प्रकृत सूत्र के द्वारा यवागू-शब्द से तृतीया विभक्ति में यवाग्वा यह रूप सिद्ध होता है। विकल्प से द्वितीया विभक्ति में यवागूम् अग्निहोत्रं जुहोति यह वाक्य भी सिद्ध होता है।

16.8 द्वितीया ब्राह्मणेम॥ (2.3.60)

सूत्रार्थ– ब्राह्मण विषयक प्रयोग में व्यवहारार्थक दिव धातु के कर्म में द्वितीया विभक्ति होती है।

सूत्रव्याख्या– इस विधिसूत्र में दो पद हैं। द्वितीया प्रथमान्त पद है। ब्राह्मणे सप्तम्यन्त पद है। और यहाँ विषयसप्तमी है। अतरू ब्राह्मणे इसका ब्राह्मण के विषय में यह अर्थ होता है। यहाँ दिवस्तदर्थस्य इस सम्पूर्ण सूत्र की अनुवृत्ति आ रही है। तदर्थ शब्द से वि-अव-पूर्वक ह्न धातु के तुल्य धातुओं तथा पण्धात्वर्थ के तुल्य धातुओं का ग्रहण है। और वह दिव् धातु दिवस्तदर्थस्य सूत्र में स्पष्ट की गई है। अधीगर्थदयेशां कर्मणि इस सूत्र से कर्मणि की अनुवृत्ति आ रही है। सूत्रार्थ इस प्रकार है कि ब्राह्मण विषयक प्रयोग में दिवस्तदर्थ के कर्म में षष्ठी विभक्ति हो। मन्त्रव्यतिरेक वेदभाग ब्राह्मण होता है।

दिवस्तदर्थस्य सूत्र से द्यूतार्थक और क्रयविक्रय रूप व्यवहारार्थक दिव् धातु से कर्म में षष्ठी विभक्ति होती है जैसे शतस्य दीव्यति यहाँ द्यूतार्थ और क्रयविक्रयरूपव्यवहारार्थक दिव् धातु का प्रयोग है। यहाँ दिव् धातु का कर्म शतम् है। अत: दिवस्तदर्थस्य से षष्ठीविभक्ति में शतस्य ऐसा प्रयोग होता है। किन्तु प्रकृत में दिवस्तदर्थस्य से कर्म में षष्ठीविभक्ति प्राप्त होने पर उसका बाधक द्वितीया ब्राह्मणे यह योग आरम्भ होता है। अत: उसका अपवाद द्वितीया ब्राह्मणे यह योग है।

उदाहरण में सूत्रार्थ का समन्वय– गामस्य तदहः सभायां दीव्येयुः इस उदाहरण में दिव्–धातु के कर्म गोशब्द से द्वितीयाविभक्ति होती है। न की षष्ठी विभक्ति। यद्यपि यहाँ ब्राह्मणविषयक प्रयोग है। और पणार्थक तथा व्यवहृर्थक दिव्–धातु का प्रयोग भी है। और दिव्–धातु वाच्यक्रिया का कर्म गौ है। लोक में तो गोः तदहः सभायां दीव्येयुः यह प्रयोग होता है।

16.9 चतुर्थ्यर्थे बहुलं छन्दसिम॥ (2.3.63)

सूत्रार्थ– छन्द विषय में चतुर्थी अर्थ में बहुल करके षष्ठी विभक्ति होती है।

सूत्रव्याख्या– इस विधिसूत्र में तीन पद हैं, चतुर्थ्यर्थे बहुलं छन्दसि। चतुर्थ्यर्थे यह सप्तम्यन्त पद है। बहुलम् यह प्रथमान्त पद है। छन्दसि यह सप्तम्यन्त पद है। यहाँ विषयसप्तमी है। षष्ठी शेषे सूत्र से शेषे इस पद की अनुवृत्ति आ रही है। अतरू सूत्रार्थ इस प्रकार होता है वेद विषय में चतुर्थी अर्थ में बहुल करके षष्ठी विभक्ति होती है। बहुल क्या होता है यह यहाँ कहा जाता है–

> **''क्वचित्प्रवृत्तिः क्वचिदप्रवृत्तिः क्वचिद्विभाषा क्वचिदन्यदेव।**
> **विधेर्विधानं बहुधा समीक्ष्य चातुर्विधं बाहुलकं वदन्तिम॥''**

अर्थात्– सूत्रोक्त कार्य की कहीं प्राप्ति नहीं होने पर भी प्रवृत्ति हो। और कहीं प्राप्ति होने पर भी अप्रवृत्ति हो। तथा कही विकल्प से प्रवृत्ति होती है। और कहीं अन्य ही कुछ होता है।

उदाहरण–गोधाकालकादार्वाखाटस्ते वनस्पतीनाम् इति।

सूत्रार्थ का समन्वय– पूर्वोक्त उदाहरण में वनस्पतीनाम् में षष्ठी विभक्ति वनस्पतिभ्यः इस चतुर्थ्यर्थ में होती है। अतरू गोधाकालकादार्वाखाटस्ते वनस्पतिभ्यः इसका अर्थ बोध करना चाहिए। सूत्र में बहुलग्रहण से वेद विषय में षष्ठ्यर्थ में चतुर्थ्य भी कर लिया जाता है। जैसे या खर्वेन पिबति तस्यै खर्वः यहाँ पर तस्यै चतुर्थ्यन्त पद तस्याः इस षष्ठ्यर्थ में प्रयुक्त है।

16.10 यजेश्च करणे॥ (2.3.63)

सूत्रार्थ– यज धातु के भी करण कारक में वेद विषय में बहुल करके षष्ठी विभक्ति होती है।

सूत्रव्याख्या– इस विधिसूत्र में तीन पद हैं। यजेः च करणे यह सूत्रगत पदच्छेद है। यजेः षष्ठ्यन्त पद है। च अव्ययपद है। करणे सप्तम्यन्त पद है। चतुर्थ्यर्थे बहुलं छन्दसि सूत्र से बहुलम् तथा छन्दसि दो पदों की अनुवृत्ति आ रही है। छन्दसि यहाँ वैषयिकसप्तमी

टिप्पणी

है। षष्ठी शेषे सूत्र से शेषे पद की अनुवृत्ति आ रही है। सूत्रार्थ इस प्रकार है यज धातु से करण कारक में वेदविषय में बहुल करके षष्ठी विभक्ति होती है। बहुल क्या होता है यह पूर्वसूत्र में कह ही चुके हैं।

उदाहरण– घृतस्य घृतेन वा यजते।

सूत्रार्थ का समन्वय- पूर्वोक्त उदाहरण में यज धातु का करण घृतम् है। उस प्रकृतसूत्र से घृत शब्द में बहुल करके करण कारक में षष्ठी विभक्ति होती है। सूत्र में 'बहुलम्' पद की अनुवृत्ति में षष्ठी के अभाव पक्ष में तृतीया विभक्ति घृतेन यजते का भी प्रयोग होता है। उससे घृतस्य घृतेन वा यजते यह प्रयोग सिद्ध होता है। लोक में तो घृतेन यजते यह एक ही प्रयोग होता है।

16.11 बहुलं छन्दसि॥ (2.4.39)

सूत्रार्थ- छन्द विषय में अद को घसलृ आदेश होता है बहुल करके।

सूत्रव्याख्या– इस विधिसूत्र में दो पद हैं। बहुलम् यह प्रथमान्त पद है। छन्दसि सप्तम्यन्त पद है, यहाँ वैषयिक सप्तमी है। अदो जग्धिर्ल्यप्ति किति सूत्र से अदः इस षष्ठ्यन्त पद की अनुवृत्ति आ रही है। लुङ्सनोर्घस्लृ सूत्र से घस्लृ की अनुवृत्ति आ रही है। आर्धधातुके यह अधिकार सूत्र है। सूत्रार्थ इस प्रकार है वेद विषय में अद के स्थान पर घस्लृ-आदेश होता है बहुल करके आर्धधातुक के परे रहते। बहुल का अर्थ पूर्व कह चुके हैं।

उदाहरण- सग्धिः।

सूत्रार्थ का समन्वय- अद्-धातु से स्त्रियां क्तिन् सूत्र से क्तिन्-प्रत्यय करने पर तथा अनुबन्धलोप होने पर अद् ति इस स्थिति में बहुलम् छन्दसि इस प्रकृतसूत्र से अद के स्थान पर घसलृ आदेश होकर और अनुबन्धलोप होकर घस् ति ऐसा रूप बनता उसके बाद घसिभसोर्हलि च इस सूत्र से घस की उपधा का लोप घ् स् ति ऐसा होने पर झलो झलि सूत्र से सकार का लोप होने पर घ् ति ऐसा होने पर झषस्तथोर्धोऽधः इस सूत्र से तकार को धकार होने पर घ् धि यह होने पर झलां जश् झशि इस सूत्र से घकार के स्थान पर जश गकार होकर ग्धि यह रूप सिद्ध होता है। उसके बाद समान शब्द के साथ पूर्वापर प्रथमचरमजघन्यसमानमध्यमध्यमवीराश्च इस सूत्र से समास होने पर समानस्य छन्दस्यमूर्धप्रभृत्युदर्केषु इस सूत्र से समान के स्थान पर स आदेश होकर सग्धिः रूप सिद्ध होता है।

16.12 हेमन्तशिशिरावहोरात्रे च छन्दसि॥ (2.4.28)

सूत्रार्थ– हेमन्त और शिशिर शब्द, तथा अहन् और रात्रि शब्दों का द्वंद्व समास में छन्द

टिप्पणी

विषय में पूर्ववत् लिङ्ग होता है।

सूत्रव्याख्या– यह विधिसूत्र है। इस सूत्र में चार पद हैं। हेमन्तशिशिरौ अहोरात्रे च छन्दसि यह सूत्रगत पदच्छेद है। हेमन्तशिशिरौ यह प्रथमान्त पद है। हेमन्तश्च शिशिरश्च हेमन्तशिशिरौ। अहोरात्रे यह प्रथमाद्विवचनान्त पद है। च यह अव्ययपद है। छन्दसि यह सप्तम्येकवचनान्त पद है। पूर्ववदश्ववडवौ इस सूत्र से पूर्ववत् पद की अनुवृत्ति आ रही है। परवल्लिङ्गं द्वन्द्वतत्पुरुषयोः इस सूत्र से द्वन्द्वः इस पद की अनुवृत्ति आ रही है। सूत्रार्थ इस प्रकार होता है वेद विषय में द्वन्द्वसमास से निष्पन्न हेमन्त और शिशिर तथा अहन् और रात्रि शब्दों का पूर्ववत् लिङ्ग होता है। पूर्ववत् इसका पूर्वपदवत् यह अर्थ है।

उदाहरण में सूत्रार्थ का समन्वय- अहश्च रात्रिश्च ऐसा विग्रह होने से द्वन्द्वसमास में अहः सर्वैकदेशसंख्यातपुण्याच्च रात्रेः इस सूत्र से समासान्त अच्प्रत्यय होकर अहोरात्रि अ ऐसा होने पर यस्येति च इस सूत्र से इकार का लोप होकर अहोरात्र यह सिद्ध होता है। उसके बाद रात्राह्नाहाः पुंसि इस सूत्र से रात्रादिशब्दों का पुल्लिंग में व्यवहार होता है इससे अहोरात्रौ यह रूप सिद्ध होता है वेद विषय में। परन्तु वेद विषय में तो अहन् इस पूर्वपद के नपुंसकलिङ्गकत्व होने से अहोरात्रे यह भी रूप सिद्ध होता है। तथा प्रयोग में अहोरात्रे का करते हैं। न केवल द्विवचन में ही यह नियम है। अपितु बहुत्वविवक्षा में भी पूर्वपद के समान लिङ्ग होना चाहिए। उसका उदाहरण अहोरात्राणि ऐसा विधान किया गया है।

हेमन्तश्च शिशिरश्च हेमन्तशिशिरौ। हेमन्त शब्द के पुंलिङ्ग होने से **हेमन्तशिशिरौ** यह रूप बनता है वेद विषय में। किन्तु लोक में **हेमन्तशिशिरे** ऐसा प्रयोग होता है। किन्तु हेमन्त शिशिर का स्त्रिलिंग न होने पर शिशिर शब्द का अस्त्रि में अर्थात् पुल्लिंग और स्त्रिल्लिंग में प्रयोग देखा जाता है। तथा शिशिरशब्द की पुंलिङ्ग पक्ष में सूत्र की वैयर्थ्यापत्ति है। नपुंसक में व्यवहार किया जाता है तो समस्तपद को परवल्लिङ्ग हो अर्थात् नपुंसकलिंग हो उसकी निवृत्ति के लिए प्रकृतसूत्र आवश्यक है।

16.13 बहुलं छन्दसि॥ (2.4.73)

सूत्रार्थ- छन्द विषय में अदादिगण से विहित शप् का बहुल करके लुक् होता है।

सूत्रव्याख्या– यह सूत्र विधिसूत्र है। इस सूत्र में दो पद हैं। बहुलम् छन्दसि यह सूत्रगत पदच्छेद है। बहुलम् यह प्रथमान्त पद है। छन्दसि यह सप्तम्यन्त पद है, यहाँ वैषयिक सप्तमी है। अदिप्रभृतिभ्यः शपः इस सम्पूर्ण सूत्र की यहाँ अनुवृत्ति आ रही है। ण्यक्षत्रियार्षञितो यूनि लुगणिञोः इस सूत्र से लुक् पद की अनुवृत्ति आ रही है। सूत्रार्थ इस प्रकार है वेद विषय में अदादिगण से विहित शप् का बहुल करके लुक् होता है। बहुल का अर्थ कह ही चुके हैं।

उदाहरण- शयते।

टिप्पणी

सूत्रार्थ का समन्वय- शी-धातु से लट्-लकार होने पर शी ल् इस स्थिति में ल के स्थान पर तकार आदेश होकर शी त होने पर कर्तरि शप् से शप्-प्रत्यय होने पर शी अ त होने पर अदिप्रभृतिभ्यः शपः से शप् को लुक् प्राप्त हुआ प्रकृत सूत्र से उसका निषेध शी अ त इस स्थिति में शीङः सार्वधातुके गुणः से ईकार को गुण एकार हुआ शे अ त इस स्थिति के बाद एचोऽयवायावः से एकार के स्थान पर अय आदेश होकर शय् अ त हुआ टित आत्मनेपदानां टेरे से टी तकार से उत्तर अकार को एकार सभी वर्णों के सम्मेलन से शयते यह रूप सिद्ध होता है। लोक में तो शेते रूप ही बनता।

16.14 बहुलं छन्दसि॥ (2.4.76)

सूत्रार्थ- छन्द विषय में जुहोत्यादिगण से विहित शप् को बहुल करके श्लु होता है।

सूत्रव्याख्या– इस विधिसूत्र में दो पद हैं। बहुलम, छन्दसि यह सूत्रगत पदच्छेद है। बहुलम् यह प्रथमान्त पद है। छन्दसि यह सप्तम्यन्त पद है, यहाँ वैषयिकसप्तमी है। अदिप्रभृतिभ्यः शपः इस सूत्र से शपः पद की अनुवृत्ति आ रही है। जुहोत्यादिभ्यः श्लुः इस सम्पूर्ण सूत्र की यहाँ अनुवृत्ति आ रही है। सूत्रार्थ इस प्रकार है छन्द विषय में जुहोत्यादिगण से विहित शप् को श्लु बहुल करके होता है। अर्थात् शप् के स्थान पर विहित श्लु आदेश कदाचित् नहीं भी होता है। और कभी कभी शप् के स्थान पर अविहित श्लु आदेश भी होता है यह सूत्र में बहुल ग्रहण आशय है।

उदाहरण- दाति प्रियाणि चिद्वसु (ऋ.7.16.11)।

सूत्रार्थ का समन्वय– दा धातु से लट्-लकार में दा ल् इस स्थिति में लकार के स्थान पर तिबादेश तथा अनुबन्धलोप होने पर दा ति होने पर शप् के लिए जुहोत्यादिभ्यः श्लुः इससे शप् को श्लु श्लौ से दा को दित्व दा दा ति ऐसा होने पर द्विरुक्त के पूर्वभाग को पूर्वोऽभ्यासः से अभ्यास संज्ञा ह्रस्वः से अभ्यास के अच् को ह्रस्व द दा ति ऐसा होने पर सभी वर्णों का सम्मेलन करने पर ददाति रूप सिद्ध होता है लोक में। प्रकृतसूत्र से शप् को श्लु न हो तो श्लौ यह सूत्र न लगकर दाति ऐसा रूप सिद्ध होता है वेद विषय में।

16.15 कृमृदुरुहिभ्यश्छन्दसि॥ (3.1.59)

सूत्रार्थः- कृ-मृदु- और रुह इन धातुओं से उत्तर च्लि के स्थान पर अङ् आदेश होता है विकल्प से वेद विषय में कर्तरिवाची लुङ परे रहते।

सूत्रव्याख्या– इस विधिसूत्र दो पद हैं। कृमृदुरुहिभ्यः छन्दसि यह सूत्रगत पदच्छेद है। कृमृदुरुहिभ्यः यह पञ्चमीबहुवचनान्त पद है। छन्दसि यह सप्तम्यन्त पद है, यहाँ वैषयिकसप्तमी है। च्लि लुङि इससे च्लि की अनुवृत्ति आ रही है, अस्यतिवक्तिख्यादिभ्योऽङ् से अङ्

की, तथा इरितो वा से वा की अनुवृत्ति आ रही है। धातोरेकाचो हलादेः क्रियासमभिहारे यङ् इस सूत्र से धातोः की अनुवृत्ति आ रही है। और वह पञ्चमीबहुवचनान्त रूप है। च्लेः सिच् इससे च्लेः की भी अनुवृत्ति आ रही है। सूत्रार्थ इस प्रकार है वेद में कर्तरीवाची कृ मृ दु रुह इन धातुओं से विहित च्लि के स्थान पर अङ् आदेश विकल्प से होता है यह सूत्रार्थ है।

उदाहरण- इदं तेभ्योऽकरं नमः।

सूत्रार्थ का समन्वय- पूर्वोक्त उदाहरण में अकरवम् यहाँ कृधातु से लुङ के स्थान पर मिप्-आदेश मेः के स्थान पर अम्-आदेश कृ अम् इस स्थिति में धातु से अट् आगम और अनुबन्धलोप होने पर कृ अम् ऐसा होने पर च्लि लुङि से च्लि और प्रकृतसूत्र से च्लि के स्थान पर अङादेश और अनुबन्धलोप होने पर ऋदृशोऽङि गुणः से धातु के ऋकार को गुण में अकार होने पर उरण् रपरः से रपरत्व अकार होने पर यह रूप सिद्ध होता है। लोक में च्लि के स्थान पर सिच् होने पर अकार्षम् यह रूप बनता है। एवम् मृधातु से तिप् वेद में अमरत्, लोक में तो अमृत रूप बनता है। दृधातु से तिप् में वेद में अदरत्, लोक में अदारीत् रूप बनता है। रुह् धातु से तिप् में वेद में आरुहत्, लोक में अरुक्षत् रूप बनता है।

पाठगत प्रश्न-16.2

9. हु धातु के कर्म को तृतीया तथा द्वितीया विभक्ति का वैकल्पिक विधान किस सूत्र से होता है?
10. द्वितीया ब्राह्मणे में कौन सी सप्तमी है?
11. द्वितीया ब्राह्मणे यह किसका अपवाद है?
12. चतुर्थ्यर्थे बहुलं छन्दसि इस सूत्र में चतुर्थ्यर्थे किस विभक्ति का विधान होता है?
13. घृतस्य यजते यहाँ षष्ठी विधायक सूत्रा कौन सा है?
14. अहोरात्रे यहाँ पूर्ववत् लिङ्ग विधायक सूत्र कौन सा है?
15. बहुलं छन्दसि से किस विषय में शप् को बहुल करके लुक् होता है?
16. छन्द विषय में जुहोत्यादिगण में शप् को बहुल करके श्लु का विधायक सूत्र कौन सा है?
17. बहुलं छन्दसि से कहाँ पर शप् को बहुल करके श्लु होता है?
18. अमरत् इसका लौकिक रूप क्या होता है?

टिप्पणी

19. अकरम् का लौकिक रूप क्या होता है?

20. कृमृदुरुहिभ्यश्छन्दसि इस सूत्र से च्लि के स्थान पर क्या होता है सिच् अथवा अङ्?

पाठ का सार

इतना तो आप देख ही चुके हैं कि- छन्द विषय में नक्षत्र वाचक पुनर्वसु शब्द तथा विशाख शब्द से द्वित्त्व वाच्य में विकल्प से एकवचन होता है, लोक में तो द्विवचनम ही होता है। छन्द विषय में अयस्मयादि पद निपातित हैं। गतिसंज्ञक तथा उपसर्गसंज्ञक शब्द व्यवधान से धातु से परे अथवा पूर्व में होते हैं। छन्द विषय में हु धातु से कर्म में तृतीया भी होती है। छन्द विषय में चतुर्थी के लिए बहुल करके षष्ठी का भी प्रयोग होता है। और यज् धातु से करण कारक में बहुल करके षष्ठीविभक्ति भी होती है। छन्द विषय में अद् धातु को बहुल करके घस्लृ आदेश होता है। छन्द विषय में अदादिगण से विहित शप् का बहुल करके लुक् होता है। छन्द विषय में जुहोत्यादिगण से विहित शप् का बहुल करके लुक् होता है। और षष्ठीयुक्तश्छन्दसि इसका योगविभाग प्रदर्शित किया गया है। और उस योगविभाग से सर्वे विधयश्छन्दसि विकल्प्यन्ते यह परिभाषा ज्ञापित होती है। उसके बाद वेद में सभी विधियां विकल्प से होती हैं यह समझा।

पाठान्त प्रश्न

21. ''षष्ठीयुक्तश्छन्दसि'' इस सूत्र की व्याख्या कीजिए।

22. ''अयस्मयादीनि छन्दसि'' इस सूत्र की व्याख्या कीजिए।

23. ''छन्दसि परेऽपि'' तथा ''व्यवहिताश्च'' इन दोनों की व्याख्या कीजिए।

24. ''चतुर्थ्यर्थे बहुलं छन्दसि'' इस सूत्र की व्याख्या कीजिए।

25. ''कृमृदुरुहिभ्यश्छन्दसि'' इस सूत्र की व्याख्या कीजिए।

26. ''सग्धिः'' इस रूप को सिद्ध कीजिए।

27. शयते इस रूप को सिद्ध कीजिए।

28. दाति इस रूप की सिद्धि कीजिए।

29. पतिना यहाँ किस प्रकार पति शब्द की घिसंज्ञा होती है।

30. द्वितीया ब्राह्मणे इस सूत्र की व्याख्या कीजिए।

पाठगत प्रश्नों के उत्तर

16.1

1. छन्द विषय में पुनर्वसू नक्षत्र के द्वित्त्व को एकवचन विकल्प से हो।
2. षष्ठीयुक्तश्छन्दसि वा।
3. व्यवहिताश्च सूत्र से।
4. 'विशाखा' नक्षत्र के नामानुसार ही 'वैशाख' मास का नामकरण हुआ।
5. छन्द विषय में गतिसंज्ञक और उपसर्गसंज्ञक पद धातु से परे भी हों।
6. सभी विधियाँ छन्द विषय में विकल्प से होती हैं।
7. षष्ठ्यन्त से युक्त पति शब्द की छन्द विषय में घिसंज्ञा विकल्प से हो।
8. नहीं होती है।

16.2

9. तृतीया च होश्छन्दसि।
10. विषयसप्तमी।
11. दिवस्तदर्थस्य।
12. षष्ठी से।
13. यजेश्च करणे।
14. हेमन्तशिशिरावहोरात्रे च छन्दसि से।
15. अद् आदि से।
16. बहुलं छन्दसि।
17. जुहोत्यादिगण में शप् को बहुल करके श्लु होता है।
18. अमृत।
19. अकार्षीत्।
20. अङ्।

सोलहवां पाठ समाप्त